गुरुमाई चिद्विलासानन्द द्वारा लिखित पुस्तक

अन्तर-शुद्धि के सोपान

उद्धरण २७

एक बार एक नवयुवक किसी ऐसी स्त्री के प्रेम में दीवाना हो गया जिसे उससे प्रेम नहीं था। वह हताशा की ऐसी स्थिति में था कि कुछ और सोच ही नहीं सकता था। उसे किसी भी चीज़ में कोई आनन्द नहीं मिलता था। वह अपना आपा खो चुका था। अन्त में, उसके एक मित्र ने उसे एक तान्त्रिक के बारे में बताया जो शहर के बाहरी छोर पर रहता था। वह नवयुवक सीधा वहाँ पहुँचा और तान्त्रिक से मदद की प्रार्थना की।

तान्त्रिक की आँखें काली थीं। वे एक अप्राकृतिक प्रकाश से चमक रही थीं। उसने कहा, "यदि तुम सचमुच चाहते हो कि मैं तुम्हारी मदद करूँ तो तुम्हें मेरे निर्देशों का अक्षरशः पालन करना होगा।"

नवयुवक ने रोते हुए कहा, "मैं करूँगा! मैं कुछ भी करूँगा! मैं बस इस भयानक भावना से उबरना चाहता हूँ।"

तान्त्रिक ने कहा, "तो, तुम्हें चालीस दिन तक एक बार भी प्रार्थना नहीं करनी है, संकट आने पर भी नहीं। और न ही तुम्हें किसी भी रूप में भगवान की आज्ञा का पालन करना है। पृथ्वी के किसी भी प्राणी के लिए कोई अच्छा काम नहीं करना है। सर्वोपरि बात यह है कि तुम्हें भगवान का नाम मुँह पर नहीं लाना है या किसी भी तरह के अच्छे आशय को व्यक्त नहीं करना है। यदि तुम इन निर्देशों का पूरी सावधानी से पालन करोगे तो मैं थोड़ा-बहुत जादू-टोना करके तुम्हारे लक्ष्य को पाने की कोई तरकीब निकाल पाऊँगा।"

वह नवयुवक सचमुच ही आसक्ति और एकतरफ़ा प्रेम की इस बीमारी से उबरना चाहता था। तो उसने वह सब कुछ किया जो उस तान्त्रिक ने उससे करने को कहा था। चालीस दिन बाद वह वापस उस अँधेरी, रहस्यमय झोंपड़ी में पहुँचा जहाँ तान्त्रिक रहता था। उसके पास जितना पैसा था वह सब उसने उस तान्त्रिक को एक ताबीज़ के लिए दे दिया। पर ताबीज़ कारगर नहीं हुआ।

तान्त्रिक ने कड़वी आवाज़ में कहा, "तुमने मेरे निर्देशों का पालन नहीं किया। पिछले चालीस दिनों के दौरान तुमसे कुछ न कुछ तो अच्छा हुआ है।"

"मैंने कोई भी अच्छा काम नहीं किया है," नवयुवक ने विरोध किया, "मैं क़सम खाकर कहता हूँ! पूरे चालीस दिन तक मैंने भगवान के बारे में नहीं सोचा। मैंने किसी के लिए कुछ अच्छा नहीं किया।

मैंने एक भी दयापूर्ण शब्द नहीं कहा। मैं किसी भी पवित्र कार्य को करने से अपने को रोकता रहा हूँ। अच्छाई जैसी किसी भी चीज़ से मैं दूर भागता था। मैं आपसे सच कह रहा हूँ।"

"सोचो, बेटा सोचो। तुमने कुछ न कुछ किया होगा—कोई छोटा-मोटा काम। वरना यह ताबीज़ तुम्हारे लिए अवश्य काम करता।"

नवयुवक ने इनकार में सिर हिलाया। उसने पिछले चालीस दिनों पर नज़र डाली पर कुछ भी नहीं था, ऐसा कुछ भी नहीं था जो टोटके को तोड़ सकता था. . . सिवाय उस बात के. . . अचानक, उसने कहा, "क्या यह सम्भव है? एक दिन जब मैं अपने काम पर जाने के लिए सड़क से गुज़र रहा था तो एक पत्थर से टकरा गया। और मैंने सोचा था, 'मुझे इस पत्थर को रास्ते से हटाकर एक ओर रख देना चाहिए ताकि कोई और इससे ठोकर खाकर न गिरे।'"

"आ. . . हा! वह एक सत्कर्म है," तान्त्रिक ने कहा। उसकी आवाज़ कठोर हो गई, "उन भगवान का उपहास मत करो जिनके हर आदेश की तुमने चालीस दिनों तक उपेक्षा की, और फिर भी, उन्होंने अपनी उदारता में इस एक छोटे-से कर्म को व्यर्थ नहीं जाने दिया।"

इन शब्दों ने नवयुवक के हृदय में एक आग सुलगा दी। उसकी लपट ऐसी ऊँची उठी कि उसने उसकी पुरानी आसक्ति को तत्क्षण भस्म कर दिया और भगवान के प्रति प्रेम का एक नया रूप उसके हृदय में अग्नि की तरह धधकने लगा। वह घर गया और लुहार का काम करता रहा। उसने उस चमत्कार को छिपाए रखा जिसने उसके जीवन को बदल दिया था। वह हर दिन एक दीनार कमाता था। हर रात, वह अपनी कमाई ग़रीबों को दे देता था। लेकिन उसका हृदय तृप्त था और उसका आनन्द सम्पूर्ण था।

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

गुरुमाई चिद्विलासानन्द, *अन्तर-शुद्धि के सोपान : दिव्य सद्गुणों का योग* अध्याय १० "सेवा," से उद्धृत [चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, २०१३], पृ. १४६-१४८।